International Journal of Applied Research 2016; 2(9): 603-606

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(9): 603-606
www.allresearchjournal.com
Received: 21-07-2016
Accepted: 22-08-2016

राजेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर–हिन्दी
राजकीय महाविद्यालय, माँट,
मथुरा, उ० प्र०

Correspondence
राजेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर–हिन्दी
राजकीय महाविद्यालय, माँट,
मथुरा, उ० प्र०

वीरेन डंगवाल की कविताओं में समकालीन राजनैतिक यथार्थ की अभिव्यक्ति

राजेश कुमार

सारांश
अपने समय–समाज के राजनीतिक सन्दर्भ से जुड़े बिना किसी भी विधा के कलाकार की रचना में उतना मूल्य और महत्व नहीं जुड़ पाता, जितनी उसकी क्षमता होती है। सबसे अधिक संवेदनशील होने के नाते कवि–कलाकार–साहित्यकार प्रायः साधारण जनता का प्रतिनिधि होता है। इसलिए भी जनता का उसका मुखापेक्षी होना स्वाभाविक है। समकालीन हिन्दी कविता के प्रतिनिधि कवि वीरेन डंगवाल जनता की इन अपेक्षाओं पर खरे उतरते हैं। राजनीतिक सन्दर्भों से गहरे और विस्तृत रूप से जुड़ी उनकी कविताएँ इसका प्रमाण हैं। उन्होंने समकालीन भारतीय राजनीति के हर उस पहलू को अपनी काव्याभिव्यक्ति का विषय बनाया है, जो यहाँ की जनता को प्रभावित कर रहा है।

कुट शब्द: समकालीन, राजनीति, जनता, लोकतन्त्र, यथार्थ

देश–काल की परिस्थिति को प्रभावित करने वाली सबसे महत्वपूर्ण शक्ति राजनीति होती है। यह बात हमारे समय के लिए भी उतनी ही ठीक है जितनी किसी अन्य काल के लिए हो सकती है। हिन्दी में कविता और राजनीति का पहली बार सीधा, व्यापक और गहरा सम्बंध प्रगतिवाद के दौर में बना, जिसके बाद यह लगातार गहराता चला गया।
आज समकालीन कविता में राजनैतिक यथार्थ की अभिव्यक्ति का सबसे महत्वपूर्ण स्थान है। कहना चाहिए कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्रा में राजनीति ने इस तरह घुसपैठ की है कि कोई उससे बच नहीं पाया है। प्रत्येक क्षेत्र का कोई न कोई राजनैतिक संदर्भ अवश्य होता है। वीरेन डंगवाल ने भी समकालीन राजनैतिक यथार्थ के विभिन्न आयामों की अभिव्यक्ति अपनी कविताओं में पूरी सजगता के साथ की है। 'दुश्चक्र में स्रष्टा' संग्रह की कविता 'हड्डी खोपड़ी ख़तरा निशान' में वीरेन ने राजनीति के अपराधीकरण की ओर संकेत किया है, जो समकालीन भारतीय राजनीति की सबसे बड़ी विसंगति है–

''डोमाजी उस्ताद सुधर चुके
और विधानसभा भी कभी की वातानुकूलित की जा चुकी
मान लिया भद्र लोगो, कोई ख़तरा नहीं बाक़ी बचा
हड्डी–खोपड़ीविहीन वह शुभ दिन
आ ही गया आख़िर हमारे देश में।''1

डोमाजी उस्ताद मुक्तिबोध की कविता 'अँधेरे में' का 'शहर का कुख्यात हत्यारा डोमाजी उस्ताद' ही है जो उस समय सभी भ्रष्टाचारियों–अत्याचारियों के साथ रात के प्रोसेशन में शामिल था। वह हत्यारा आज जनता का प्रतिनिधि बन चुका है। यह समकालीन भारतीय राजनीति के अपराधीकरण की ओर कवि का संकेत है। इसं संदर्भ में पंकज चतुर्वेदी लिखते हैं–
''मुक्तिबोध ने 'डोमाजी उस्ताद' को 'शहर का कुख्यात हत्यारा' कहा था, लेकिन आज के कवि को यह सुविधा नहीं रही; क्योंकि हत्यारा अब एक भद्र वेश विन्यास में प्रस्तुत ही नहीं है, बल्कि नीति–निर्माण की उच्चतम राजनीतिक व्यवस्था में स्वीकृत और समादृत भी हो चला है और विडंबना यह कि जिस मध्यवर्गीय भ्रदलोक की इस आपराधिकता से असहमति और रंजिश थी, उसने भी इसके विरुद्ध कोई जोखिम उठाने से इंकार कर दिया है।

कितने व्यंग्य के साथ वीरेन ने हमारे राष्ट्रीय जीवन में उतर आयी इस प्रतिरोध–हीनता के दर्द की अगवानी की है; जैसे विधनसभाएँ वातानुकूलित न होतीं, तो 'डोमाजी' का यह अभ्युदय भी संभव नहीं था।''2

विधनसभा भी 'वातानुकूलित' हो चुकी है। जी हाँ! उन अपराधी नेताओं के अनुकूल और सारी सुख–सुविधओं से संपन्न। राजनेताओं की सुख–सुविध का इंतजाम ही सारे देश की समृद्धि का पैमाना माना जा रहा है। कवि ने व्यंग्य किया है कि पहले तो हमें ख़तरों का आभासा दिलाने के लिए जगह–जगह 'हड्डी खोपड़ी' का ख़तरा–निशान लगाया जाता था, लेकिन अब ख़तरे इतने छिपे हुए हैं कि कहीं ख़तरे का निशान लगाया ही नहीं जा सकता; और इसका अर्थ यह मान लिया गया कि अब कहीं कोई ख़तरा नहीं।

वीरेन डंगवाल भारतीय राजनीति के इस यथार्थ की स्वाभाविक अभिव्यक्ति करते हैं कि देश की प्रगति का अधिकांश लाभ नेताओं को मिल रहा है। आम जनता जहाँ जीवन–यापन की अपनी न्यूनतम आवश्यकताएँ भी नहीं पा सकती, वहीं राजनेताओं के लिए सारी सुख–सुविधाएँ सुलभ हैं।

विधान–सभाओं में, संसद में ये नेता जो अमर्यादित व्यवहार करते हैं, उसका सारा नुकसान जनता को उठाना पड़ता है। रोज़ का लाखों का ख़र्च होता है, लेकिन अधिकांश जनप्रतिनिधि संसद में सिर्फ विरोध–प्रदर्शन करने के लिए जाते हैं। रोज़–रोज़ के हंगामें में संसद में कोई काम भले ही न हो, लेकिन राजनेताओं को हर महीने के हिसाब से वेतन और भत्ते ज़रुर मिलते हैं। वीरने ने इन स्थितियों का भी वर्णन अपनी कविताओं में किया है। 'सभा' शीर्षक एक कविता का उदाहरण दृष्टव्य है–

''भीतर वालों ने भितरघात किया
बाहरवालों ने बहिर्गमन
अध्यक्ष रूठे कुछ देर को
सम्विधान के अनुच्छेदों के निर्देशानुसार
सदन स्थगित हुआ
भत्ता मिला सबको
यों चलती ही रही हमारी सभा
चलती ही रही मार–काट।''3

जो ख़ुद गाली–गलौज, आरोप–प्रत्यारोप, मार–काट में लिप्त हों वे भला जनता का क्या ध्यान रखेंगे और क्या प्रतिनिधित्व करेंगे! लेकिन विवशता है कि यही हमारे प्रतिनिधि हैं। इतना सब करते हुए भी दावा यह कि 'सम्विधान के अनुच्छेदों के निर्देशानुसार सदन स्थगित हुआ'। कवि का व्यंग्य है कि संविधन और लोकतंत्र की धज्जियाँ उड़ाने के बावजूद दावा यह है कि हमने संविधन के नियमों का पालन किया।

देश की राजनीतिक हालत आज यह है कि जनता के सामने कोई भी प्रतिनिधि खरा नहीं उतरता जिसके कारण किसी को बहुमत नहीं मिलता और गठबंधन के सहारे बनने वाली अनियतकालीन सरकार का कोई ठिकाना नहीं कि कब तक चल पाए। राजनीतिक दल आपस में गठबंध्न भी करते हैं तो निजी स्वार्थों की शर्त पर, और यदि इसमें उन्हें कहीं असपफलता की आशंका होती है तो सरकार से समर्थन वापस ले लेते हैं। ऐसी सरकार की हालत हमेशा डावांडोल रहती है–

''ना–ना करते भी
जैसे खड़े–खड़े चलनी थी सरकार
अपूर्ण बहुमत में थरथराती''4

जब देश की सरकार का ही कोई आधार न हो और वह थरथरा रही हो, तो देश की बाक़ी व्यवस्थाओं का अंदाज़ा आसानी से लगाया जा सकता है।

राजनीति से समकालीन कवि को मोहभंग ज़रुर हुआ है, लेकिन लोकतंत्र में उसकी आस्था आज भी कम नहीं हुई है और यही कारण है कि वह संसदीय राजनीति की विसंगतियों पर जितना करारा व्यंग्य करता है, आम जनता के लोकतांत्रिक अधिकारों की उतनी ही तत्परता से पैरवी भी करता है। इसी क्रम में वीरेन स्वतंत्रता के साठ साल बाद भी जनता की बुरी दशा की ओर संकेत करते हैं। यहाँ भी सारी सरकारी नीतियों का खोखलापन उजागर होता है। लोगों ने स्वतंत्रता का बस नाम सुना है,उससे कुछ लाभ भी हुआ है, इसका उन्हें कोई अनुभव नहीं। दरअसल लाभ का हिस्सा उनके पास तक पहुँचा ही नहीं । उनके लिए तो सब कुछ निरर्थक है। 'झण्डा' शीर्षक कविता में एक बच्चे के आत्मालाप के माध्यम से कवि ने स्वतंत्रता की व्यर्थता की ओर संकेत किया है–

''यार, काग़ज से बनाये जाने कितने झण्डे
खिंचते भी देखे सिनेमा में भी
इतने बड़े हुए मगर छूने को न मिला अभी तक
कभी असल झण्डा
कपड़े का बना, हवा में फड़फड़ करने वाला
असल झण्डा
छूने तक को न मिला''5

वीरेन डंगवाल की कविताओं में राजनीतिक संदर्भ इस तरह घुल–मिल गए हैं कि उन्हें किसी एक दृष्टि से पूरी तरह समझा ही नहीं जा सकता है। इस तरह उनकी कविताएँ बहुआयामी हो गई हैं। दरअसल आज प्रत्येक क्षेत्र पर राजनीति का इतना ज़्यादा असर है कि कवि भी उन प्रभावों को अनदेखा नहीं कर सका है। यही करण है कि उनकी राजीनति से इतर कविताओं में भी राजनीतिक संदर्भ अधिकांशतः मिल जाते हैं। राजनीति और रचनाकार के संबंध में बात करते हुए राजेश जोशी लिखते हैं––

''राजनीति वस्तुतः किसी भी रचनाकार के सर्जक व्यक्तित्व का ही हिस्सा है। अन्य तत्वों के साथ उसकी राजनीतिक चेतना भी उसकी रचना प्रक्रिया में ही अन्तर्गुम्फित होती है। उसकी राजनीति उसकी रचना के शिल्प, भाषा और रचना कौशल के हर पक्ष में प्रतिध्वनित और प्रतिबिम्बित होती है।''6

वीरेन डंगवाल के संबंध में भी यह बात ठीक उतरती है। यह जीवन के प्रति गहरे जुड़ाव तथा परिवेश के प्रति सूक्ष्म दृष्टि के कारण संभव हो पाया है कि वे हर क्षेत्र में राजनीति की घुसपैठ को पकड़ पाते हैं। उदाहरण के लिए, निम्नलिखित पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं, जिसमें कवि 'दुख' के बारे में कविता लिख रहा है, लेकिन उसमें अनायास ही राजनैतिक संदर्भ आ गया है––

''अँधेरे में भी पहचानी जा सकती है
दुखी आदमी की आवाज़
नकली दुखी आदमी की आवाज़ में
टीन का पत्तर बजा है
मसलन मारे गये लोगों पर
राजपुरुष का रुँधा हुआ गला''7

समकालीन भारतीय राजनीति में भी यह आम बात हो गई है कि दुर्घटना या हमले में मारे गए लोगों के प्रति राजनेता ;राजपुरुष सिर्फ औपचारिकतावश सहानुभूति जताने के लिए जाते हैं और दो–चार बूंद नकली आँसू बहाकर फिर अपने वैभव–विलासपूर्ण जीवन में वापस लौट आते हैं। दरअसल आज राजनीति की विरूपता इतना विस्तार पा चुकी है कि कवि को सब कुछ राजनीतिमय ही दिखाई दे रहा है, इसीलिए वह अपनी कविताओं में बार–बार राजनीतिक संदर्भ देता है। राजनीति इतनी व्यापक होती है कि वह जीवन के कोने–कोने को प्रभावित कर जाती है, यहाँ तक कि प्रकृति भी उससे नहीं बच पाती। देश में 1975 के

आपातकाल के बाद 1976 के वसंत के बारे में वीरेन डंगवाल लिखते हैं––

''इस बार तने के भीतर से ही
ख़ून में सनी हुई
उगी हैं कोंपलें
ज़रा–सी हवा चलने पर काँपती हैं
यों बाहर से कतई साबुत
और दुरुस्त
खड़ा है पेड़
लेकिन भीतर कुछ है
जो दिमाग़ की नसों की तरह फटा है''8

वीरेन डंगवाल अपने परिवेश को सिर्फ एक आयाम से नहीं देखते, वे अलग–अलग कोणों से हर एक परिघटना का निरीक्षण करते हैं। उनकी कविताओं में विषय से बिल्कुल अलग संदर्भों के आने का यह भी एक महत्वपूर्ण कारण है। 'इसी दुनिया में' संग्रह की भूमिका में उनकी विशेषता बताते हुए नीलाभ ने लिखा है–
''वीरेन की एक और ख़ासियत है–चीज़ों को नये पहलू से देखने की नज़र। वही–वही चिर–परिचित चीज़ें कविता में उठाते हुए वीरेन उन्हें एक अनोखे कोण से देखता है और पाठक के सामने पेश करता है।''9
समकालीन कविता की जो एक महत्वपूर्ण विशेषता, अपने परिवेश के प्रति अधिकाधिक चौकन्नापन है, वह इस कवि के संबंध में पूरी तरह लागू होती है। अन्य कवि भी अपने परिवेश को देखते–समझते और परखते हैं, लेकिन वीरेन डंगवाल कहीं अधिक चौकन्ने हैं, सजग हैं; वे सूक्ष्म निरीक्षण करते हैं और चीज़ों के पारस्परिक संबंध का अध्ययन करते हैं। इसी के फलस्वरूप उनकी कविताएँ चीज़ों के प्रति अलग दृष्टिकोण के साथ हमारे सामने आती हैं। इसका एक उदाहरण उनकी 'नदी' शीर्षक कविता है, जिसमें वे बाढ़ आई नदी के व्यवहार की तुलना राजनीतिक स्थितियों से करते हैं–

''फिर वहीं लौट जाती है नदी
एक छिनार सकुचाहट के साथ
अपने सम्वैधानिक किनारों में
और मधुर–मधुर बहने लगती है
जैसे लाठी–चार्ज पर झूठ–मूठ शर्मिन्दा
और गोली–काण्ड को एक सही मजबूरी
साबित करने की कोशिश करती हुई''10

बाढ़ की नदी विनाशलीला के बाद फिर अपने किनारों में लौट जाती है। इसी तरह राजनेता और नौकरशाह जनता पर अत्याचार करने के बाद जब आलोचनाओं का सामना करते हैं तो पुनः 'संविधान' की दुहाई देने लगते हैं; शर्मिंदा होते हैं, लेकिन इस भाव के साथ कि ऐसा करना उनकी मजबूरी थी–– संवैधानिक मजबूरी। कवि का संकेत शासकों द्वारा जनता पर किये गये अत्याचारों, आपातस्थितियों आदि की ओर है, जो आज की राजनीति का एक अनिवार्य हिस्सा है।
वीरेन डंगवाल समकालीन राजनीति की उस विरूपता की ओर संकेत करते हैं जहाँ देश के हर आदमी का राजनेताओं द्वारा अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए प्रयोग किया जा रहा है। मज़दूर, कर्मचारी, अफ़सर, सैनिक सब उनकी स्वार्थपूर्ति के साधन मात्रा हैं। हमें कुछ नहीं पता होता। हम समझते हैं कि यह हमारी देश–भक्ति है, हमारा कर्त्तव्य है। 'रामसिंह' शीर्षक कविता में वीरेन डंगवाल आज की व्यवस्था के उन षड्यंत्रों का उद्घाटन करते हैं जो मनुष्य को हिंसक और संवेदनहीन बना रहे हैं। पहले कुछ सवाल करके कवि रामसिंह के विचारों को झकझोरना चाहता है––

''तुम किसकी चौकसी करते हो रामसिंह?
तुम बन्दूक के घोड़े पर रखी किसकी उँगली हो?
किसका उठा हुआ हाथ ?
किसके हाथों में पहना हुआ काले चमड़े का नफ़ीस दस्ताना ?
ज़िन्दा चीज़ में उतरती हुई किसके चाकू की धार ?
कौन हैं वे, कौन ?
जो हर समय आदमी का एक नया इलाज ढूँढ़ते रहते हैं ?''11

आदमी आज की षड्यंत्रकारी व्यवस्थाओं के हाथों की मशीन हो गया है, जिससे जब चाहे जो करवा लिया जाए। वह जड़ और संवेदनहीन हो चुका है, और उसकी उस संवेदनहीनता पर ख़ुश होकर व्यवस्था उसे पुरस्कृत करती है। वीरेन डंगवाल इसे 'ख़राब समय' कहकर संबोधित करते हैं क्योंकि अमानवीय व्यवस्थाओं के शिकंजे में जकड़ा हुआ सबकुछ इतना जड़, संवेदनहीन और विकृत हो गया है कि जीवन के शुभ व कोमल पक्ष के रूप में कुछ शेष ही नहीं रहा–

''वे माहिर लोग हैं रामसिंह
वे हत्या को भी कला में बदल देते हैं।
पहले वे तुम्हें कायदे से बन्दूक पकड़ना सिखाते हैं
फिर एक पुतले के सामने खड़ा करते हैं
यह पुतला है रामसिंह, बदमाश पुतला
इसे गोली मार दो, इसे संगीन भोंक दो
उसके बाद वे तुम्हें आदमी के सामने खड़ा करते हैं
ये पुतले हैं रामसिंह, बदमाश पुतले
इन्हें गोली मार दो, इन्हें संगीन भोंक दो, इन्हें...इन्हें...इन्हें...
वे तुम पर ख़ुश होते हैं, तुम्हें बख़्शीश देते हैं
तुम्हारे सीने पर कपड़े के रंगीन पूफल बांध्ते हैं''12

इस तरह कवि की तीखी नज़र उस अमानवीय व्यवस्था पर है जो हत्या, लूट और संवेदनहीनता को महिमामण्डित कर रहा है, पुरस्कृत कर रहा है।
वह चाहे राजनीति का क्षेत्र हो या जीवन का अन्य कोई क्षेत्र, विरूपता का महिमा–मण्डन इसलिए हो रहा है कि आज अधिकांश लोग ऐसा होने के ख़िलाफ़ आवाज़ नहीं उठा रहे हैं। यह सारी ज़िम्मेदारी इसी समाज के लोगों की है। हम ऐसे लोगों का सम्मान करते हैं जो अवांछनीय कार्य करते हुए अपने आप को निर्मल आवरण से ढके रहते हैं। लेकिन वीरेन डंगवाल की कवि–दृष्टि सबकी असलियत देख लेती है–

''किसने आख़िर ऐसा समाज रच डाला है
जिसमें बस वही दमकता है, जो काला है?
मोटर सफ़ेद वह काली है
वे गाल गुलाबी काले हैं''13

दरअसल यहाँ जो जितना सफ़ेद, चमकदार, सुन्दर और सुरूप दिख रहा है, वह भीतर से उतना ही काला और कुरूप है। समकालीन भारतीय राजनीति का भी यही यथार्थ है कि नेताओं की चमक–दमक कुछ और होती है, कारनामा कुछ और ही। वीरेन डंगवाल तो अपना ऐसा नेता चाहते हैं जो सर्वसुलभ हो, जो जनता के हित में काम करे, जो घाघ न हो–

''इतने दुर्गम मत बन जाना
सम्भव ही रह जाय न तुम तक कोई राह बनाना

इतने चालू मत हो जाना सुन–सुन कर हरकतें तुम्हारी पड़े हमें शरमाना
बग़ल दबी हो बोतल मुँह में जनता का अफसाना
ऐसे घाघ नहीं हो जाना''14

एक बारगी तो ये पंक्तियाँ किसी नेता को दिये गए उपदेश की तरह लगती हैं, लेकिन वास्तव में इनके माध्यम से वीरेन डंगवाल ने समकालीन राजनीतिक यथार्थ का चित्रण किया है। आज के नेता तक आम जनता की पहुँच नहीं होती; ये इतने घाघ और चालाक होते हैं कि मंच पर आते हैं तो जनता के हित और उसकी सेवा तथा त्याग की बात करते हैं, लेकिन मंच से उतरते ही वैभव–विलास में लिप्त हो जाते हैं।

कवि–कलाकार की सार्थकता तभी है जब वह अपने समय–समाज के यथार्थ और सम्भावित आदर्श को अपनी रचना में दर्ज़ कर सके। वीरेन डंगवाल ने समकालीन भारतीय राजनीति के यथार्थ के हर पहलू को नज़दीक से देखा–समझा है और अपनी कविताओं के माध्यम से उनकी प्रभावशाली अभिव्यक्ति की है, इस आशा के साथ कि 'आयेंगे, उजले दिन ज़रुर आयेंगे'।

सन्दर्भ–सूची

1. वीरेन डंगवाल, 'दुश्चक्र में स्रष्टा', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करणः 2002, पृष्ठ– 12–13
2. पंकज चतुर्वेदी, 'पहल'– 72, पृष्ठ– 163
3. वीरेन डंगवाल, 'इसी दुनिया में', नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करणः 1991 ,पृष्ठ– 38
4. वीरेन डंगवाल, 'दुश्चक्र में स्रष्टा', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करणः 2002, पृष्ठ– 82
5. वीरेन डंगवाल, 'इसी दुनिया में', नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करणः 1991, पृष्ठ– 104
6. राजेश जोशी, 'एक कवि की नोटबुक', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करणः 2004,पृष्ठ– 40
7. वीरेन डंगवाल, 'इसी दुनिया में', नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करणः 1991 पृष्ठ– 30
8. वही, पृष्ठ– 31
9. वही,पृष्ठ– 6
10. वही,पृष्ठ– 75–76
11. वही, पृष्ठ– 17
12. वही, पृष्ठ– 17–18
13. वीरेन डंगवाल, 'दुश्चक्र में स्रष्टा', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करणः 2002, पृष्ठ– 15
14. वीरेन डंगवाल, 'इसी दुनिया में', नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करणः 1991 पृष्ठ– 11